हिन्दी नवजागरण में महावीरप्रसाद द्विवेदी का वैशिष्ट्य

बीज शब्द :
हिन्दी नवजागरण, सरस्वती, महावीर प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी नवजागरण और महावीरप्रसाद द्विवेदी

ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
शोध संचयन

हिन्दी नवजागरण में महावीरप्रसाद द्विवेदी का वैशिष्ट्य उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व, सृजन क्षमता, विद्वता, गहन शोधपरक मूल्यांकन, निरीक्षण व अटूट हिन्दी सेवा में परिलक्षित होता है। उन्होंने सरस्वती जैसी पत्रिका को हिन्दी की सशक्त पत्रिका के रूप में प्रतिस्थापित कर हिन्दी प्रदेश में एक नयी सामाजिक चेतना का प्रसार किया है। इसके माध्यम उन्होंने हिन्दी नवजागरण में वैचारिक क्रान्ति उत्पन्न की। और वे नवजागरण से जुड़े लेखकों के प्रेरणास्रोत बने। प्रस्तुत शोधपत्र हिन्दी नवजागरण में आचार्य द्विवेदी के महत्त्व को रेखांकित करने का प्रयास है।

डॉ० नीतू बंसल
अतिथि प्रवक्ता (हिन्दी विभाग)
क०मुं०हिन्दी भाषा विज्ञान विद्यापीठ,
डॉ० बी०आर० अम्बेडकर विश्वविद्यालय,
आगरा।

भारतेन्दु युग हिन्दी नवजागरण का आरम्भ माना जाता है और द्विवेदी युग इसका आधार स्तम्भ। जो नवजागरण 1857 के स्वाधीनता संग्राम से आरम्भ हुआ, वह भारतेन्दु युग में व्यापक हुआ और द्विवेदी युग में साम्राज्य विरोधी, सामंत विरोधी प्रवृत्तियाँ और भाषायी प्रवृत्तियाँ और अधिक पुष्ट हुईं। इसका श्रेय महावीर प्रसाद द्विवेदी को ही है जिन्होंने हिन्दी प्रदेश में नवीन सामाजिक चेतना का प्रसार किया। सरस्वती के माध्यम से उन्होंने लेखकों का ऐसा दल तैयार किया जो नवीन चेतना का प्रसार कर सके। महावीरप्रसाद द्विवेदी ने वैज्ञानिक ढंग से हिन्दी समाज की अनेक समस्याओं का गहराई से विवेचन किया। राजनीति और अर्थशास्त्र के साथ उन्होंने आधुनिक विज्ञान का भी परिचय प्राप्त किया। भारत के प्राचीन दर्शन और विज्ञान का अध्ययन कर यह जानने का प्रयत्न किया कि भारतीय कहाँ पिछड़े हुए हैं। भारतेन्दु युग में पुरानी व्यवस्था को बदलने की माँग जहाँ-तहाँ सुनाई देती है, द्विवेदी युग में वह माँग अधिक उग्र हो जाती है और इसके पीछे आचार्य द्विवेदी की कर्मठता व साधना रही है। आचार्य द्विवेदी का प्रभावशाली व्यक्तित्व और कृतित्व का सुखद परिणाम हिन्दी नवजागरण को पुष्टता प्रदान करता है।

हिन्दी नवजागरण में महावीरप्रसाद द्विवेदी के वैशिष्ट्य पर चर्चा करते समय सर्वप्रथम हम उनके व्यक्तित्व, कृतित्त्व का साक्षात्कार करेंगे तत्पश्चात् उनके सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व भाषिक वैशिष्ट्य पर चर्चा करेंगे।

प्रभावशाली व्यक्तित्व के स्वामी आचार्य द्विवेदी का जन्म 5 मई सन् 1864 में रायबरेली जिले के दौलतपुर गाँव में एक निर्धन परिवार में हुआ था। द्विवेदी जी की स्कूली शिक्षा बहुत मुश्किल से हुई। मैट्रिक तक पढ़ाई करने के बाद वे रेलवे में नौकरी प्राप्त कर अजमेर चले गये। वहाँ एक वर्ष तक नौकरी करने के बाद उन्होंने इस्तीफा दे दिया, फिर वे अपने पिता के पास बंबई चले गए और तार का काम सीखा। वहीं उन्होंने इंडियन मिडलैंड रेलवे में नौकरी कर ली। वे तारबाबू हो गये और 25 रुपये मासिक वेतन पाने लगे। अपनी प्रतिभा, लगन व कर्मठता से उनकी पदोन्नति होती गयी।

द्विवेदी जी ने अनेक भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। उर्दू, अंग्रेजी, फारसी, गुजराती, मराठी, बंगला, आदि भाषाओं में दक्षता प्राप्त की। 1896 में उन्होंने लॉर्ड बेकन के नाम से 36 निबंधों का अनुवाद किया। 1899 में ये निबन्ध 'बेकन-विचार रत्नावली' के नाम से प्रकाशित हुए। 1898-99 में उन्होंने श्री हर्ष एवं उनके महाकाव्य नैषधीय चरितम् पर अपनी पहली आलोचनात्मक पुस्तक 'नैषध-चरित चर्चा' लिखी जो हिन्दी की पहली आलोचना पुस्तक

मानी जाती है। 1903 में उन्होंने सरस्वती पत्रिका का कार्यभार संभाला। उस समय वे रेलवे में नौकरी करते थे। रेलवे की नौकरी और पत्रिका का कार्यभार दोनों को संभालना मुश्किल हो रहा था। अत: 1904 में उन्होंने 200 रूपये प्रतिमाह की रेलवे की नौकरी छोड़ दी और 25 रू0 प्रतिमाह की पत्रिका सरस्वती में पूरी तरह साहित्यजीवी रहने का निर्णय लिया। यह हिन्दी सेवा के लिए एक बहुत बड़ा त्याग था। 'सरस्वती' हिन्दी नवजागरण की एक सशक्त पत्रिका के रूप में स्थापित हुई। अत्यधिक परिश्रम से उन्हें अनिद्रा रोग हो गया। इस रोग के कारण उन्हें सरस्वती से कई बार अवकाश लेना पड़ा और अन्तत: 21 दिसम्बर 1938 को उनका देहावसान हो गया। प्रेमचंद ने लिखा है ''द्विवेदी जी का जीवन साहित्य और साधना तप का जीवन है। साहित्य ही उनका सर्वस्व है। उनकी चिंता और कल्पना और आकांक्षा और विनोद सबका स्रोत एक था और वह साहित्य है। साहित्य उनके लिए कीर्ति का साधन न था और धन का तो हो ही क्या सकता था। पांडित्य प्रदर्शन भी उनकी मनोवृत्ति न थी। उनके हृदय में इसकी जड़ें उतनी ही गहरी थीं जितनी हमारे जीवन में स्वार्थ और ममत्व की होती हैं। उनका स्वार्थ भी यही था और परमार्थ भी यही था।''[1]

द्विवेदी जी भाषाविद् होने के साथ-साथ अनेक विषयों के विद्वान भी थे। उन्होंने साहित्य के अतिरिक्त विज्ञान, दर्शन, इतिहास, पुरातत्त्व, अर्थशास्त्र, जीव जन्तु, वनस्पति, समाजशास्त्र आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण लेखन किया है, भारत में अंग्रेजी राज्य की विश्लेषणात्मक आलोचना की है। हिन्दी नवजागरण के माध्यम से वे राष्ट्रीय नवजागरण तक पहुँचते हैं और आधुनिक हिन्दी नवजागरण के प्रणेता बनकर भाषा सुधारक व हिन्दी परिष्कार के माध्यम से वे भारतीय जनमानस के प्रेरणास्रोत बनते हैं। अब हम हिन्दी नवजागरण में द्विवेदी जी का विविध क्षेत्रों में वैशिष्ट्य पर चर्चा करेंगे।

राजनीतिक दृष्टि से भारत अँग्रेजों का उपनिवेश था। भारत जैसे विशाल देश को ब्रिटिश जैसा छोटा देश गुलाम बना लेता है। मुट्ठीभर अँग्रेज करोड़ों भारतवासियों को लूटकर अपना घर भरते हैं। यह स्थिति उतनी ही अस्वाभाविक है जितनी कि असह्य। महावीरप्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती पत्रिका के माध्यम से भारतीयों में राजनीतिक चेतना जाग्रत करने का अथक प्रयास किया। अनेक कवियों, लेखकों, साहित्यकारों को देशप्रेम पर कविताएँ, लेख, आलेख लिखने के लिए आमंत्रित किया। 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक के रूप में द्विवेदी जी ने कवियों, लेखकों में राजनीतिक चेतना की ऐसी अलख जगायी जिसने समस्त भारतीय जनमानस में क्रांति का परिवेश तैयार किया। वे पहले राजनीतिज्ञ थे जिन्होंने ब्रिटिश शासन का खुलकर विरोध किया और इसका प्रमाण उनकी पुस्तक 'सम्पत्तिशास्त्र' है। 'भारत के सन्दर्भ में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की वैसी आलोचना उस समय तक अँग्रेजी में प्रकाशित नहीं हुई थी। हिन्दी में उसके टक्कर की दूसरी पुस्तक नहीं।'[2]

द्विवेदी जी ने अर्थशास्त्र से सम्बन्धित पुस्तक 'सम्पत्तिशास्त्र' लिखी जिसमें उन्होंने भारत की आर्थिक स्थिति का सूक्ष्म निरीक्षण किया है और अँग्रेजों की अर्थनीति के पीछे उनके झूठ को भी उजागर किया है। सितम्बर 1917 की 'सरस्वती' में 'भारतवर्ष का कर्ज' लेख में उन्होंने बताया कि, ''अँग्रेज हिन्दुस्तान का शासन इस तरह चलाते हैं कि साल दर साल उस पर कर्ज बढ़ता जाता है।''[3] उन्होंने अँग्रजों की व्यापार नीति की विस्तृत आलोचना की। द्विवेदी जी ने लिखा है-''प्रजा के हित चिन्तकों की राय है कि इस देश की ज़मीन प्रजा की है न राजा की है न ज़मींदारों की।''[4] भारत में अँग्रेजों ने यहाँ के व्यापार का नाश करके औद्योगीकरण की जड़ें ही काट दीं। द्विवेदी जी ने अँगेजों की व्यापार नीति की विस्तृत आलोचना की। अँग्रेजों ने भारत के सामन्तों से मिलकर पहले यहाँ की ज़मीन पर कब्जा कर लिया फिर यहाँ के व्यापार पर अधिकार किया। 'गाँव की जिस बदहाली का चित्रण द्विवेदी जी ने सम्पत्तिशास्त्र में किया है, वह सब प्रेमचन्द के कथा साहित्य की पृष्ठभूमि है।'[5]

सामाजिक दृष्टि से द्विवेदी जी ने भारतीय सामाजिक रूढ़ियों को नष्ट करने, पुरानी वर्ण व्यवस्था बदलने, जाति बिरादरी का भेदभाव मिटाकर व छुआछूत आदि कुरीतियों पर अपने लेखों के माध्यम से कुठाराघात किया। उन्हें सुदृढ़ सामाजिक संरचना में बाधक माना। इस दृष्टि से वे नवजागरण के प्रणेता बनकर उभरे हैं। 'सरस्वती में इतिहास और समाजशास्त्र पर जो निबन्ध छपे वे आधुनिकता-बोध के विचार से मूल्यवान हैं। जुलाई 1915 की सरस्वती में ''सत्यशोधक का समाजशास्त्र'' शीर्षक निबन्ध छपा।'[6] आचार्य द्विवेदी ने सरस्वती में नवीन सामाजिक चिन्तन पर बल दिया। उन्हें विश्वास था कि लगातार वैज्ञानिक चिन्तन का प्रचार-प्रसार करने से लोगों के पुराने संस्कार उसी तरह बदलेंगे जिस तरह चिकित्साशास्त्र के ज्ञान से लोग अपने रोगों और उनकी चिकित्सा के बारे में बुद्धि से काम लेते हैं। आचार्य द्विवेदी सामाजिक नियमों की खोज पर बल देते हैं।

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध और 20वीं सदी के प्रारम्भिक दशकों में समाज सुधार के अनेक आन्दोलन चलाये गये। इसी तरह हिन्दी नवजागरण ने भी समाज का ढांचा बदलना चाहा। पुराने रीति-रिवाजों, कुरीतियों का संरक्षक सामन्त वर्ग था और सामन्त वर्ग को स्थायित्व ब्रिटिश शासकों ने दिया। हिन्दी प्रदेश में समाजशास्त्र के आन्दोलन सामन्त विरोधी हैं। द्विवेदी जी ने अपनी पुस्तक 'सम्पत्तिशास्त्र' में सामन्तवादी शक्तियों का विरोध किया साथ ही सरस्वती के माध्यम से अनेक लेखकों का दल तैयार किया जो सामन्तवाद का खुलकर विरोध कर सके।

द्विवेदी जी ने भारतीय संस्कृति और विज्ञान का अध्ययन कर सांस्कृतिक महत्त्व को पहचाना। 'हिन्दी भाषी प्रदेश में एक ओर पुराने भारतीय वैज्ञानिक चिन्तन का पुनरुद्धार करने के लिए, दूसरी ओर पुराने अन्धविश्वासों को निर्मूल करने के लिए उन्होंने महत्त्वपूर्ण कार्य किया।'[7] भारत की प्राचीन विवेक परम्परा को जीवित रखते हुए उसे नवीन परिस्थितियों में विकसित किया। द्विवेदी जी का दृष्टिकोण प्राचीन संस्कृति के प्रति नकारात्मक नहीं है। वह उसके पुनर्मूल्यांकन के पक्ष में हैं। वे जानते थे कि प्राचीन संस्कृति पर गर्व, राष्ट्रीय आत्मसम्मान की भावना अत्यंत मूल्यवान है। भारत के सांस्कृतिक इतिहास में आर्यभट्ट का विशेष स्थान है। उन्होंने गणित और ज्योतिष के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है। द्विवेदी जी ने कहा है- 'वास्तव में आर्यभट्ट को भारतवर्ष का न्यूटन कहना चाहिए।'[8] आचार्य द्विवेदी ने सरस्वती के माध्यम से सांस्कृतिक नवजागरण में विशिष्ट योगदान दिया है। सरस्वती में पदार्थ विज्ञान, परमाणुवाद, भूगर्भ विद्या, ज्योतिर्विद्या आदि वैज्ञानिक विषयों पर निरन्तर लेख प्रकाशित होते रहे। और इस तरह आधुनिक विज्ञान की जानकारी देकर द्विवेदी जी सरस्वती के पाठकों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रचार करते रहे, किन्तु उन्होंने सबसे ज्यादा लेख डार्विन और विकासवाद पर छापे। डार्विन की विचारधारा ने ही सारी दुनिया में धार्मिक अंधविश्वासों की जड़ें हिला दी थीं। '19वी सदी के अन्त में हिन्दी प्रदेश में जो नवजागरण आरम्भ हुआ, वह अन्य प्रदेशों के नवजागरण से कई बातों में भिन्न है। वह रहस्यवाद और तक्रविरोधी पुनरुत्थानवाद का समर्थक नहीं है। वह प्राचीन संस्कृति पर गर्व करना सिखाता है किन्तु उसके विवेकपूर्ण पुनर्मूल्यांकन पर जोर देता है।'[9] महावीर प्रसाद द्विवेदी वैज्ञानिक शिक्षा के साथ प्राचीन भारतीय संस्कृति का सम्बन्ध स्थापित करते हैं। यह नवजागरण अतीत के प्रति भावुकता, पुनरुत्थानवाद और रहस्यवाद की दृष्टि नहीं अपनाता। हिन्दी नवजागरण मूलत: बुद्धिवादी और रहस्यवाद विरोधी है।

आचार्य द्विवेदी ने हिन्दी भाषा के विकास का बीड़ा उठाया था। उन्होंने हिन्दी के शब्द भंडार में पर्याप्त अभिवृद्धि की। आवश्यकतानुसार एक ओर तो सरल, तत्सम संस्कृत शब्दों का प्रयोग प्रचलित किया, दूसरी ओर बंगला, मराठी, उर्दू और अँग्रेजी के सरल शब्दों को स्थान दिया। उन्होंने अपनी कर्मठता, विद्वता से खड़ीबोली हिन्दी की सामर्थ्य और साहित्यिक समृद्धि को प्रगति पथ पर अग्रसरित किया। सरस्वती पत्रिका में उन्होंने अपनी कविता 'हे कविते' में खड़ीबोली का तत्सम शब्द रूप पाठकों के समक्ष रखा-''सुरम्य रूप! रस राशि रंजिते विचित्र वर्णाभरणे! कहाँ गई?

अलौकिकानंद विधायिनी महा कवींद्र कांते! कविते! अहो कहाँ?''[10]

द्विवेदी जी ने अपने लेख 'कवि कर्तव्य' में लिखा है-''गद्य-पद्य की भाषा पृथक-पृथक नहीं होनी चाहिए..... सभ्य समाज की भाषा हो, उसी भाषा में गद्य पद्यात्मक साहित्य चाहिए।..... बोलना एक भाषा में और कविता में प्रयोग करना दूसरी भाषा प्राकृतिक नियमों के धहै जो लोग हिन्दी बोलते हैं और हिन्दी ही के गद्य साहित्य की सुश्रुषा करते हैं उसके पद्य में ब्रजभाषा का आधिपत्य बहुत दिन नहीं रह सकता है।'[11] द्विवेदी जी ने भाषा व्याकरण की त्रुटियों की ओर हिन्दी लेखकों और पाठकों का ध्यान आकर्षित करने हेतु सरस्वती में भाषा और व्याकरण नामक स्वलिखित लेख प्रकाशित किया और उसमें लिखा है कि 'जिस भाषा में बड़े-बड़े इतिहास, काव्य, नाटक, दर्शन विज्ञान और कला-कौशल से सम्बन्ध रखने वाले महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे जाते हैं, उसका शृंखलाबद्ध होना बहुत जरूरी है। उसका व्याकरण बनाना चाहिए। लिखित भाषा में ही ग्रंथकार अपने कीर्तिकलाप को रखकर अपना नश्वर शरीर छोड़ जाते हैं। व्याकरण ही उस कीर्ति का प्रधान रक्षक है.....।'[12]

निराला ने लिखा है- 'वह आधुनिक हिन्दी के निर्माता हैं- विधाता है- सर्वस्व हैं। वह राष्ट्रभाषा हिन्दी के मूर्तमान स्वरूप हैं। उन्हें लोग आचार्य कहते हैं- वह सचमुच आचार्य हैं। आधुनिक हिंदी की उन्नति और विकास का अधिकांश श्रेय उन्हीं आचार्य को है।'[13] द्विवेदी जी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में व हिन्दी सम्पक्र भाषा के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया साथ ही हिन्दी के साथ उसके अन्तर्विरोध पर भी ध्यान केन्द्रित कर गहराई से विश्लेषण किया। आगे उन्होंने हिन्दी भाषा के साथ उसके साहित्य को भी समृद्ध करने का प्रयास किया और हिन्दी गद्य में ज्ञान साहित्य के विविध द्वार खोले। ज्ञान में ही नहीं वरन् कलात्मक साहित्य को भी उन्नत किया। द्विवेदी जी ने नये-नये लेखकों को नये-नये विषयों पर लिखने के लिए प्रेरित किया। एक नयी सामाजिक चेतना के विकास और परिष्कार का कार्य किया। कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' आदि लेख लिखकर गुप्त जी को साकेत जैसा महाकाव्य रचना की प्रेरणा दी।

निष्कर्ष- हिन्दी नवजागरण में महावीरप्रसाद द्विवेदी का वैशिष्ट्य मात्र हिन्दी प्रदेश के लिए नहीं वरन् समस्त प्रदेशों में अपनी सशक्त भूमिका अदा करता है। द्विवेदी जी के महत्त्व को रेखांकित करते हुए प्रेमचंद ने कहा है- ''आज हम जो कुछ भी हैं, उन्हीं के बनाये हुए हैं। यदि पं0 महावीरप्रसाद द्विवेदी न होते तो अभी बेचारी हिन्दी कोसों पीछे होती-समुन्नति की इस सीमा तक आने का उसे अवसर ही नहीं मिलता। उन्होंने हमारे लिए पथ भी बनाया और पथ प्रदर्शक का भी काम किया। हमारे ऊपर उनका भारी ऋण है और उनके चरणों पर झुककर ही हम उसे स्वीकार कर सकते हैं- किसी अन्य प्रकार से नहीं।''[14] हिन्दी नवजागरण में योगदान द्विवेदी जी ने दिया है और जो हिन्दी की सेवा की

है इतनी किसी ने नहीं की है। श्री रमाशंकर अवस्थी ने लिखा है- ''हिन्दी के इतिहास इस व्यक्ति विशेष से इतनी घनिष्ठता के साथ सम्बद्ध है कि अकेले द्विवेदी जी के साथ वर्तमान हिन्दी का विकास उसी तरह लिपटा हुआ है, जिस तरह किसी बड़े वृक्ष के साथ हिन्दी की लताएं लिपटी हुई होती हैं।''[15] इसतरह द्विवेदी जी का महत्त्व आधुनिक हिन्दी साहित्य का मार्ग प्रशस्त करने में रहा है।

समग्रत: हिन्दी नवजागरण में महावीरप्रसाद द्विवेदी का वैशिष्ट्य उनकी सशक्त भूमिका अदा करता है।

संदर्भ सूची:-

1. प्रेमचंद, हंस, मई, 1933
2. शर्मा, रामविलास, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, चतुर्थ संस्करण, पृष्ठ 389।
3. वही, पृ0 29।
4. वही, पृ0 30।
5. वही, पृ0 383।
6. वही, पृ0 163।
7. वही, पृ0 119।
8. वही, पृ0 121।
9. वही, पृ0 143।
10. सरस्वती, 1901, पृ0 198।
11. सरस्वती, 1901, पृ0 232।
12. सरस्वती, 1905, पृ0 426 द्वितीय अनुच्छेद।
13. शर्मा, रामविलास, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, चतुर्थ संस्करण, पृ0 392।
14. प्रेमचंद, हंस, द्विवेदी अभिनंदनांक, अप्रैल 1933।
15. यायावर, भारत, महावीर प्रसाद द्विवेदी का महत्त्व, किताबघर प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 439।

(पृष्ठ 27 का शेष)

विमकैडफाइसिस के एक मुद्रा-प्रकार पर शिव की उपस्थिति प्रतीक रूप में त्रिशूल-परशु के माध्यम से दिखायी गयी है।[25]

जयदायमन् ने अपने पुत्र का नाम रूद्रदामन् रखा। इससे भी जयदामन् के शिव-भक्त होने की संभावना बढ़ जाती है। अत: उपरोक्त तथ्य के आधार पर यह सुझाव दिया जा सकता है कि जयदामन् शैव मतावलम्बी रहा होगा।

सन्दर्भ:-

1. रामशरण शर्मा, प्रारम्भिक भारत का परिचय, ओरियन्ट ब्लैक स्वान, नई दिल्ली, 2009, पृ0 189.
2. रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988, पृ0 71.
3. रामशरण शर्मा, प्रारम्भिक भारत का परिचय, ओरियन्ट ब्लैक स्वान, नई दिल्ली, 2009, पृ0 190.
4. रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988, पृ0 71.
5. भगवत शरण उपाध्याय, भारतीय संस्कृति के स्रोत, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1979, पृ0 69.
6. रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988, पृ0 71.
7. रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988, पृ0 71.
8. रामशरण शर्मा, प्रारम्भिक भारत का परिचय, ओरियन्ट ब्लैक स्वान, नई दिल्ली, 2009, पृ0 192-193.
9. विस्तृत विवरण के लिए देखें, डॉ0 जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1999, पृ0 755.
10. ए0के0 नारायण, जर्नल ऑफ दि न्यूमिसमेटिक सोसायटी ऑफ इण्डिया, XXXV, पृष्ठ 73-77.
11. जी0के0 जेनकिंस तथा ए0के0 नारायण, क्वाइन टाइप्स ऑफ दि शक-पह्लव किंग्स ऑफ इण्डिया, वाराणसी, 1957, पृ0 3, संख्या 27.
12. पूर्वोक्त, पृ0 7, संख्या 18.
13. पूर्वोक्त, पृ0 10, संख्या 26.
14. पूर्वोक्त, पृ0 17, संख्या 2, 3.
15. पी0 गॉर्डनर, कैटलॉग ऑफ दि क्वाइंस ऑफ दि ग्रीक एण्ड सिथिक किंग्स ऑफ बैक्ट्रिया एण्ड इण्डिया, इन दि ब्रिटिश म्यूज़ियम्, लन्दन (भारतीय संस्करण), नई दिल्ली, 1971, फलक XXV.6] 8-
16. पूर्वोक्त, फलक XXV.10-
17. पूर्वोक्त, फलक XXVII.7-
18. ग्रिट्ली फ़ॉन मिटरवॉल्नर, कुषाण क्वाइंस एण्ड कुषाण स्कल्पचर्स फ्रॉम मथुरा, 1986, पृ0 194, चित्र संख्या 19a, b.
19. पी0 गॉर्डनर, पूर्वोक्त, फलक XXVIII.15, 16-
20. पूर्वोक्त, फलक XXIX.9, 10-
21. डी0सी0 सरकार, सेलेक्ट इंस्क्रिप्शंस, I, पृ0 419, छंद 6.
22. ई0जे0 रैप्सन, कैटलॉग ऑफ दि क्वाइंस ऑफ दि आंध्र डायनेस्टी, दि वेस्टर्न क्षत्रप्स, दि त्रैकूटक डायनेस्टी एण्ड दि ''बोधि'' डायनेस्टी इन दि ब्रिटिश म्यूज़ियम, लन्दन, (भारतीय संस्करण), नई दिल्ली, 1975, फलक X और आगे।
23. पूर्वोक्त, फलक X.265.
24. के0के0 थपल्याल एवं प्रशान्त श्रीवास्तव, क्वाइंस ऑफ एंशिएंट इण्डिया, लखनऊ, 1998, पृ0 179-180.
25. पी0 गॉर्डनर, पूर्वोक्त, फलक XXV.10.